Volume-6, No. 1, Feb-2019, pp.Hin.01-05

मानव कल्याण एवं विश्वशान्ति में उपनिषदों का योगदान

डॉ. वीरेन्द्र कुमार ,
असिस्टेंट प्रोफसर, शिक्षाशास्त्र विभाग
डी.पी.बी.एस. पी.जी. कालिज अनूपशहर बुलन्दशहर उ.प्र. भारत।

शिक्षा किसी भी देश की सभ्यता और संस्कृति का अनिवार्य अंग है। शिक्षा के द्वारा न केवल व्यक्ति का सर्वांगीण विकास होता है, अपितु सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत का संरक्षण भी शिक्षा से ही होता है। शिक्षा ज्ञान की साधना है। ज्ञान आत्मा का प्रकाश है। शिक्षा के उद्‌देश्य मनुष्य जीवन के उद्‌देश्यों से भिन्न नहीं है। शिक्षा एक प्रणाली है जिससे जीवन के उद्‌देश्य प्राप्त होते हैं। शिक्षा मानव की उन अन्तर्निहित शक्तियों, कुशलताओं एवं गुणों का विकास करती है जिनसे वह अपने जीवन के उद्‌देश्यों को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त करता है। मानव जीवन का लक्ष्य है ''धर्माचरण के द्वारा अर्थ और काम पुरूषार्थों की साधना करते हुए परमपुरूषार्थ 'मोक्ष' अर्थात् सत् चित् आनन्दस्वरूप परमात्मा की प्राप्ति करें'' वैदिक शिक्षा की दृष्टि से विद्या का मुख्य उद्‌देश्य भी यही बताया गया है **''सा विद्या या विमुक्तये''** इस परम लक्ष्य की प्राप्ति हेतु व्यावहारिक पक्ष की शिक्षा भी आवश्यक मानी गयी है। भारतीय विद्वानों की दृष्टि में शिक्षा का लक्ष्य जीवन निर्माण, मनुष्य निर्माण तथा चरित्र निर्माण है। उपनिषदों में विश्वशान्ति की अनेक सूक्तियां दी गयी है। जिनकों मानव जीवन में अपना कर मनुष्य अपने जीवन को सुखमय एवं शान्ति पूर्ण बना सकता है। इसके साथ–साथ सम्पूर्ण विश्व भी शान्ति एवं सौहार्दय के मार्ग पर चल सकता है। इस लेख में इसको समझाने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द– शान्ति, त्याग भावना, वेदोक्त कर्म, तत्व ज्ञान, सत्य एवं शान्ति, सत् चिन्तन, इन्द्रिय नियन्त्रण, भ्रातृभाव व एकता

समग्र विश्व में निवास करने वाले सभी लोग अपने देश, भाषा, संस्कृति, धर्म, परम्परा इत्यादियों को प्रेम करते हैं। अपने आप को विश्व समुदाय के सामने विशेष रूप में उपस्थापित करने के लिये प्रयत्न करते हैं। इस उपस्थापन की दौड में इतने लालायित होते हैं कि अपनी भाषा, संस्कृति व परम्परा को विशेष एवं उत्कृष्ट प्रतिपादन करने के लिये दूसरों के ऊपर दबाव डालने लगते हैं, जिसके परिणाम स्वरूप आभ्यन्तरिक संघर्ष उत्पन्न होता है जिससे सभी लोग अशान्ति की ओर भागते हैं। दूसरों की शान्ति भंग करने के साथ साथ अपने शान्तिपूर्ण जीवन को भी पूर्णतः विनष्ट कर देते हैं। इस परिप्रेक्ष में मुण्डक उपनिषद में कहा गया है –

अविद्यायामन्तरे वर्तमानाः स्वयंधीराः पण्डितं मन्यमानाः।
जंघन्यमानाः परियन्ति मूढा अन्धेनैव नीयमाना यथाऽन्धाः। (मुण्डकोपनिषद् 1–2–8)

अर्थात् अविद्या, अज्ञान और पाखाण्ड इत्यादि कर्मजाल में फंसे हुए लोग जो स्वयं को धीर तथा पण्डित मान बैठते हैं ऐसे मूढ पुरुष कर्मजन्य दुःखों से परिपूर्ण हो कर नाना प्रकार कष्ट से जर्जरित होते हैं। उनका जीवन उसी प्रकार बन जाता है जैसे अन्धे के द्वारा अन्धा ले जाया जा रहा हो। वह स्वयं कूप या गढ्ढे में गिरता तो है हि, साथ साथ दूसरों को भी गढ्ढे में गिराता है। आज का मानव मतमतान्तर के झगडे में पडकर यथार्थ बोध से रहित होता है एवं इधर उधर भटकता हुआ ठोकर खाता रहता है। फलस्वरूप समग्र संसार असत्य, हिंसा, संघर्ष, द्वेष, विवाद इत्यादियों से परिपूर्ण हो जाता है जिससे समग्र संसार की स्थिति असन्तुलित हो जाती है।

मानव समाज की इस अशान्तपूर्ण दिशाहीन जीवन धारा को देखते हुए समग्र विश्व में शान्ति स्थापना के लिये विश्वशान्ति को अपनाने का प्रयास किया जा रहा है। सत्य, न्याय, अहिंसा का मार्ग अपनाते हुए विश्व में शान्ति स्थापना के लिये जोर दिया जा रहा है। मानव के अन्दर विद्यमान असत्य भावना, हिंसक प्रवृत्ति, द्वेष भाव, विवादीय चिन्तन, अनैतिक आचरण, इत्यादियों को परित्याग करते हुए आत्मशान्ति को प्राप्त होता है। फलस्वरूप समाज के प्रति प्रेम भाव उत्पन्न होता है। विश्व के सभी सदस्यों का यह सद्भाव ही विश्वशान्ति है।

पूरे विश्व में हमारे भारत वर्ष को ही विश्वशान्ति का केन्द्र माना गया है। क्यों कि भारत के प्राचीन दिव्य ज्ञान वेद, उपनिषद्, ब्राह्मण, आरण्यक, पुराण, इतिहास इत्यादि समाज के शान्तिमार्ग को बतलाते हैं। इन सभी शास्त्रों में विश्वशान्ति के सन्दर्भ में बहुत सारे तत्व उपलब्ध होते हैं।

त्याग भावना एवं शान्ति –

त्याग भारतीय संस्कृति का मूल आधार है। त्याग से ही मानव सफलता के उच्च शिखर तक पहुँच सकता है। जब मानव के जीवन में यह भावना उत्पन्न हो

जाती है तब शान्ति का मार्ग प्रशस्त हो जाता है। इस सन्दर्भ में ईशावास्योपनिषद् में कहा गया है –

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः मा गृधः कस्य स्विद्धनम्।
(ईशावास्योपनिषद्–1)

अर्थात् हे सुख शान्ति के अभिलाषियों ! इस सृष्टि में जो कुछ चराचर जगत है ईश्वर से व्याप्त है और सर्वशक्तिमान परमात्मा ने इसे त्यागा हुआ है। अर्थात् हमारे लिये बनाया है। इसका उपभोग त्याग पूर्वक करो, लोभ लालच मत करो। क्योंकि काम क्रोध एवं लोभ यह तीन मानव के विनाश करने वाले हैं।

इस प्रकार छान्दोग्य उपनिषद में त्यागभावना रूपी समाज कल्याण की शिक्षा मिलती है। इस सन्दर्भ में कहा गया है –

अमृतत्वं देवेभ्य आगायानीत्यागायेत्स्वधां पितृभ्य आशां मनुष्येभ्यस्तृणोदकं पशुभ्यः स्वर्गं लोकं यजमानायान्नमात्मन आगायानीति। एतानि मनसा ध्यायन्नप्रमत्तः स्तुवीत।
(छान्दोग्योपनिषद्– 22–2)

अर्थात् प्रमाद–आलस्य रहित सच्चे हृदय से श्रद्धा भक्ति के साथ उक्त तत्वों की स्तुति करे। जैसे महान विद्वानों के लिये अधिक दिन तक जीवित रहने की प्रार्थना करे, जिससे वे अपने ज्ञान द्वारा देश का भला बहुत काल तक करते रहे, रक्षक विशेष बलशाली क्षत्रियों के लिये अन्न शक्ति की प्रार्थना करे जिस से देश रक्षा के कार्य को सम्यक प्रकार से कर सके। देश द्रोही न होवें, वैश्यों के लिये आशा और पशुओं के लिये तृण के लिये प्रार्थना करता है। परन्तु अपने लिये कहता है हे प्रभु ! मुझे अपने लिये कुछ नहीं चाहिये।

वेदोक्त कर्म एवं शान्ति –

वेदोक्त कर्म अर्थात् उत्तम कर्म जिससे समाज का हित साधित हो। मनुष्य कर्म करने में स्वतन्त्र और फल भोगने में परतन्त्र है। अर्थात् अपने कर्मों के अनुसार फल प्राप्त करता है। मनुष्य के पास कर्म करने के तीन साधन हैं शरीर, वाणी और मन। शारीरिक कर्म के द्वारा मनुष्य दीन दुःखियों की रक्षा करता है तथा माता, पिता, गुरुजन, साधु सन्तों की सेवा करता है। वाणी से सत्य एवं प्रिय वचन बोलता है तथा स्वाध्याय एवं प्रवचन के द्वारा उचित उपदेश देता है और मन से दया, श्रद्धा, प्रेम, भक्ति, समर्पण इत्यादि भावनाओं के द्वारा दूसरों का उपकार करता है। अतः कहा गया है –

कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः।
(ईशावास्योपनिषद् 2)

अर्थात् हे सुख के इच्छुक ! तू इस संसार में यज्ञ, गो, राष्ट्र रक्षादि वेदोक्त कर्म को करता हुआ सौ वर्ष पर्यन्त जीने की इच्छा कर। उपर्युक्त मन्त्रों का समीक्षण के द्वारा यह ज्ञान होता है कि इस संसार में काम, क्रोध, लोभ, मोह इत्यादि को परित्याग पूर्वक त्याग, अहिंसा, मन, कर्म और वचन से पवित्र भाव को अपना कर जीवन यापन करने के लिये निर्देश दिया गया है जिससे समग्र विश्व में शान्ति सम्भव हो सके। समाज कल्याण परिवार से शुरु होता है। अतः समाज को शिक्षा देते हुए कहा गया है

देवपितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्। मातृदेवो भव। पितृदेवो भव (तैत्तिरीयोपनिषद्–1–1–1)

इत्यादि। अर्थात् हे प्रिय शिष्य ! देव कार्य, पितृ कार्य, अर्थात् जीवित माता, पिता, दादा, दादी, और वृद्ध जनों की सेवा में कभी आलस्य प्रमाद मत करना, नित्य इनका अनुष्ठान करना। क्योंकि माता–पिता, आचार्य और विद्वान् अतिथि इनको देव समान मानकर सेवा करना। देवता वही है जो जीवन कल्याणार्थ कुछ देवे। वे हमारा लालन, पालन, पोषण करते हैं और उत्तम शिक्षा देते हैं। इसलिये देव कहलाते हैं। पुनश्च हे शिष्य, तू अपने जीवन में इन्हीं कर्मों का आचरण करना, निन्दित नहीं शिष्ट सम्मत हो। हमेशा सत् आचरण करना। कोइ भी दुर्गुण को मत अपनाना। इत्यादि।

तत्व ज्ञान की प्राप्ति एवं शान्ति –

यहाँ तत्व ज्ञान से तात्पर्य यह है कि किसी भी विषय के ऊपर विचार न करके उसका प्रतिकूल आचरण करना। अतः कहा गया है –

असूर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृत्ताः।
तांस्ते प्रेत्यभिगच्छन्ति ये के चात्महनो जनाः।।
(ईशावास्योपनिषद्–3)

अर्थात् जो लोग अपनी आत्मा के प्रतिकूल आचरण करते हैं वे अज्ञानान्धकार से परिपूर्ण आसुरी लोकों को मृत्यु के उपरान्त प्राप्त करते हैं। ऐसा मनुष्य निश्चय ही पाषाण सदृश, घोर स्वार्थी एवं असुर तुल्य होता है। अतः ऐसे कर्म को त्यागने के लिये कहा गया है। अन्यथा शान्ति कहीं भी सम्भव नहीं होगी।

तैत्तिरीय उपनिषद के सप्तम अनुवाक में ब्रह्माण्ड के सारे तत्व तथा शरीर तत्व के बारे में वर्णन करते हुए कहा गया है कि इन दोनों तत्वों को ठीक ठाक जानकर मानव शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करे। जैसे इन पञ्चकों के मेल से यह ब्रह्माण्ड और शरीर स्थिर होता है। अलग–अलग होने पर अर्थात् एक दूसरे का सहयोग न हो तो न यह ब्रह्माण्ड स्थिर रह सकता है और न यह शरीर। इस प्रकार शारीरिकादि तीन उन्नतियाँ भी तब ही व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र में हो सकती है। जब सब के सब एक दूसरे का सहयोग करें, ईर्ष्या व द्वेष न करें। एक दूसरे के दुःख में दुःख व सुख में सुख समझते हुए ईश्वर की ओर बढें। इस अपने भौतिक शरीर, धन

व मन को परोपकार में लगाएँ और समग्र संसार में सुख शान्ति फैलाएँ।

सत्य एवं शान्ति–

कहा गया है सत्ये सर्वं प्रतिष्ठितम्। अर्थात् सम्पूर्ण जगत् सत्य के द्वारा प्रतिष्ठापित है। परन्तु इस संसार में सत्य ज्ञान का मुख लोभरूपी स्वर्णपात्र से ढका हुआ है। लोभ, असत्य, अशान्ति व अज्ञानवश लोग सत्य को देखने में असमर्थ होते हैं। अतः हम उस परमात्मा से प्रार्थना करें कि वह सत्य ज्ञान पर छाए हुए उन अज्ञानावरणों को हटा दे ताकि हम सत्यज्ञान व सत्यधर्म को देख सकें तथा जान सकें। अतः कहा गया है–

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये।।
(ईशावास्योपनिषद्–2)

पुनश्च **सत्यमेव जयते नानृतम्, सत्येन पन्था विततो देवयानः** (मुण्डकोपनिषद–3–1–6)

इस प्रकार कहते हुए कहा गया है कि संसार में सत्य की जय होती है, असत्य की नहीं। देवताओं का दिव्य मार्ग भी सत्य के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। ऋषिगण जिस मार्ग पर चलते हैं वह सत्य मार्ग ही है। इस मार्ग पर चलते हुए विश्व के जन समुदाय विश्वशान्ति को प्राप्त कर सकता है।

सत् चिन्तन एवं शान्ति–

छान्दोग्य उपनिषद में रुद्र की उपासना करते हुए यजमान प्रार्थना करता है–

अत्र यजमानः परस्तादायुषः स्वाहा पजहि
परिधिमित्युक्त्वोत्तिष्ठति तस्मै रुद्रा
माध्यन्दिनँसवनँसप्रयच्छति।
(छान्दोग्योपनिषद्–24–10)

अर्थात् इस जीवन के पश्चात् अगले जीवन के लिये भी यजमान यही ईश वन्दना करे कि प्रभो, मेरा भावी जीवन भी इस प्रकार रुद्र ब्रह्मचारियों के समान तपस्वी, इन्द्रियों का संयमी और कुवासनाओं का हन्ता होवे। इस प्रकार इस मन्त्र के द्वारा यह विदित होता है कि कुवासना ही संसार में तनावपूर्ण वातावरण निर्माण करता है। लोग उसके पूर्ति के लिये प्रयास करते हुए नीच और घृण्य कार्य करते हैं जिससे समग्र वातावरण में अशान्ति फैल जाती है।

मानव जब सहनशील, विचारसम्पन्न एवं उच्चविचार से युक्त होते हुए सत् चिन्तन करने लगता है तब समाज में अशान्ति का स्थान नहीं रहता है। यहाँ यजमान को निर्देश देते हुए कहा गया है–

क्व तर्हि यजमानस्य लोक इति।
स यस्तं न विद्यात्कथं कुर्यादथ विद्वान्कुर्यात्।
(छान्दोग्योपनिषद्– 24–2)

अर्थात् ब्रह्मचारी का यह पृथ्वी लोक है, ये पृथ्वी के समान सहनशील और सबको वास देने वाला बने। रुद्र ब्रह्मचारियों का अन्तरिक्ष लोक है, अन्तरिक्ष के समान विशाल हृदय वाला हो, संकुचित और हीन विचार वाला न हो। आदित्य ब्रह्मचारियों का द्यु लोक है, द्यु लोक के समान उच्च विचार वाला एवं सूर्य वत् तेजस्वी एवं अविद्या एवं पाखांड को दूर करने वाला होवें।

पुनश्चः–**यश्छन्दसामृषभोविश्वरूपः........**
(तैत्तिरीयोपनिषद्–1–4–1)

इत्यादि मन्त्रों में सर्वैश्वर्य युक्त इन्द्र के वर्णना के प्रसंग में तैत्तिरीयोपनिषद में मानव के व्यक्तिगत जीवन को शान्तिपूर्ण बनाने के बारे में जो वर्णन किया गया है वह इस प्रकार है। हे प्रभो ! मेरे इस व्यक्तिगत जीवन को सब प्रकार से उन्नत और सुखी करो। उत्तम धारणावती बुद्धि से मैं युक्त हो जाऊँ। जिस प्रकार विद्वान् जन अमृत को धारण करते हैं, मैं अमृत का धारण करने वाला बनूँ अर्थात् मेरे जीवन अमृतमय होवे, मेरा शरीर हृष्ट–पुष्ट, नीरोग और बलिष्ठ हो। मेरी वाणी सत्य, प्रिय, सार्थक सारगर्भित उच्चरण करने वाली हो। असत्य और अनर्गल कटु न बोलें। कानों से में भद्र सुनूँ, आखौं से भद्र देखुँ इत्यादि।

इन्द्रियनियन्त्रण एवं शान्ति–

इस सृष्टि की संरचना में इन्द्रियों का भी विशेष योगदान है। हमारे शास्त्रों में इन्द्रियों की संख्या 11 (एकादश) बताये गये हैं। आँख, नाक, कान, जिह्वा, त्वचा इत्यादि पाँच ज्ञानेन्द्रिय, हाथ, पैर, गुदा, उपस्थ, वाक् इत्यादि पाँच कर्मेन्द्रिय तथा मन को एकादशतम इन्द्रिय कहा गया है। सभी इन्द्रिया हमेशा अपने अपने विषयों के पीछे भागने को कोशिश करती रहती हैं जिससे तनाव उत्पन्न होता है एवं मनुष्य प्रमादग्रस्त होता है। इस सन्दर्भ में कठोपनिषद में कहा गया है–

आत्मानं रथिनं बिद्धि शरीरं रथमेव तु।
बुद्धिं तु सारथि बिद्धि मनः प्रग्रहमेव च।।
इन्द्रियाणि हयान्याहुर्विषयास्तेषु गोचरान्।
आत्मेन्द्रियमनो युक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः।।
(कठोपनिषद्–3/3–4)

अर्थात् मनुष्य का शरीर रथ है, इस में विद्यमान जीवात्मा रथ का स्वामी है। बुद्धि ही रथ को चलाने वाला सारथी है। मनुष्य का मन घोडे को थामने वाली लगाम है। शरीर की इन्द्रियाँ ही इस रथ को हाकने वाले घोडें हैं। इन्द्रियों के विषय ही वे रास्ते हैं जहाँ घोडें रथ को ले जाते हैं। इस प्रकार यहाँ पर यह संदेश दिया गया है कि जो व्यक्ति इन्द्रियों को अपने वश में कर के जीवन यापन करके अपने कर्तव्य पथ पर चलते हुए एक अनुशासित जीवन व्यतीत करता है वह शान्ति के मार्ग को प्राप्त कर सकता है।

इस प्रकार

शमः च स्वाध्याय प्रवचने च

(तैत्तिरीयोपनिषद्–1–9–1) इस मन्त्र के द्वारा कहा गया है कि मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार रूपी अन्तःकरण चतुष्टय को शान्त सुविचार वाला रखना।

दमः च स्वाध्याय प्रवचने च

(तैत्तिरीयोपनिषद्–1–9–1)

में इन्द्रियों को अपने वश में करने की सलाह दी जाता है।

भ्रातृभाव व एकता एवं शान्ति–

भ्रातृभाव व ऐक्यभावना से सम्बन्धित अनेक दृष्टान्त हमारे प्राचीन साहित्यों में उपलब्ध होते हैं। इन सभी दृष्टान्तों का गहन अध्ययन करते हुए हर कोई अपना व्यक्तित्व को सफलता के उच्च शिखर तक पहुँचा सकता है। ऐसा एक दृष्टान्त ईशावास्योपनिषद में भी प्राप्त होता है। जीवन में शान्ति प्राप्त करने के लिये जिसका अनुसरण किया जा सकता है। जैसे–

यस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मन्नेवानुपश्यति।
सर्वं भूतेषु चात्मानं ततो न विचिकित्सते।।

(ईशावास्योपनिषद–6)

अर्थात् जो विज्ञ पुरुष समस्त प्राणियों को परमात्मा के अन्दर देखता है तथा सर्व प्राणियों में परमात्मा को देखता है वह परमात्मवेत्ता कभी संशयाग्रस्त नहीं होता है। इस प्रकार भूतेषु भूतेषु विचिन्त्य धीराः प्रेत्यास्माल्लोकादमृताः भवन्ति (केनोपनिषद्–2–7) यह कहते हुए निर्देश दिया गया है कि जो व्यक्ति सभी प्राणियों में उस परमेश्वर को देखते तथा अनुभव कर लेते हैं वह इस संसार से मुक्त हो कर अमरत्व को प्राप्त कर लेते हैं। इसके अतिरिक्त पुनः कहा गया है–

यस्मिन् सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यतः।।

(ईशावास्योपनिषद–7)

अर्थात् जो लोग परमात्मा में सर्व प्राणियों की विद्यमानता का अनुभव करते हुए सर्व प्राणियों को स्वात्मा के तुल्य जानते हैं, उन्हें मोह तथा शोक प्राप्त नहीं होता, क्योंकि इस चराचर सृष्टि में सत, चित, आनन्द के स्वरूप परमात्मा को देखने के कारण सर्वत्र एकात्मकता तथा ऐक्यभाव का दर्शन करते हैं।

उपर्युक्त मन्त्र में यह बताया गया है कि मोह और शोक का परित्याग पूर्वक जिसने सर्वत्र एकत्व का अनुभव या दर्शन किया है वह सुख शान्ति को प्राप्त कर सकता है। क्योंकि पुत्र, कलत्र, धनादि का मोह एवं उसके नष्ट होने पर शोक तथा सन्ताप करना ही अशान्ति का मूल कारण है। पुत्र तथा राज्यादि के मोह के कारण महाभारत जैसा महाविनाशक युद्ध हुआ। उसी प्रकार दूसरों की उन्नति को देखकर भी लोगों के मन में ईर्ष्या, द्वेष भावना उत्पन्न हो जाते हैं जिससे अशान्ति उत्पन्न होती है और चारों ओर अराजकता फैल जाती है। अतः यहाँ पर मानव को निर्देश दिया गया है कि हे मानव, तू सुख–शान्ति चाहता है तो सबके साथ–साथ आत्मवत् समभाव का व्यवहार कर।

अतः कठोपनिषद के एक मन्त्र में सभी को जाग्रत अवस्था में रहते हुए साथ चलने को निर्देश दिया गया है। जैसे–

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्गं पथस्तत् कवयो वदन्ति।।

(कठोपनिषद–3–14)

इसी तत्व को ध्यान में रखते हुए समाज सुधारक, परिब्राजक, समाज के युवा वर्गों के आदर्श स्वामी विवेकानन्द जी ने समग्र विश्व समाज को उद्बोधन देते हुए निर्देश दिया था।

निष्कर्ष–

उपनिषदों के महत्व को बिना किसी साम्प्रदायिक भेद भाव के सभी देशों, मतों और सम्प्रदायों ने अपनाया है तथा उन्हे सार्वभौमिक मान्यता मिली है। शान्ति परमात्मस्वरूप एक परमतत्व है जिसको प्राप्त करने के कई मार्ग इसके अन्तर्गत बताये गये हैं जिनसे सामान्य रूप से कई तत्वों का उपस्थापन इस लघु शोध में किया गया है। इस प्राविधिक युग में भागदौड भरी जिन्दगी एवं प्रतिस्पर्धा प्रवृत्ति से संयुक्त आज के समाज में लोगों को उचित शिक्षा देने व उचित मार्गदर्शन कराने के लिये उपनिषदों का शैक्षिक तत्वों के अनुसरण मात्र से ही समग्र मानव मात्र का कल्याण एवं विश्व में शान्ति को पुनः प्रस्थापित किया जा सकता है। अतः निष्कर्ष के रूप में यहाँ कई विचार प्रस्तुत किये जा रहे हैं। जैसे–

विद्यालय स्तर से उत्तम समाज, राष्ट्र तथा विश्व का निर्माण होता है, अतः उसी स्तर से ही बालकों को त्याग, एकता व भ्रातृभाव से सम्बन्धित तत्वों की शिक्षा प्रदान करना।

- छात्रों में भावनात्मक एकता की प्रवृत्ति का विकास करना।
- रामादिवत् प्रवर्तितव्यं न रावणादिवत् इस प्रकार दुष्कर्म का परित्याग पूर्वक वेदोक्त कर्मों का परिपालन करने के लिये छात्रों को प्रेरित करना।
- छात्र जैसे विचार सम्पन्न, विशुद्ध मस्तिष्क युक्त व सत् चिन्तन से समन्वित होवें इसीलिये विद्यालयी पाठ्यक्रम में मूल्य शिक्षा का प्रचलन करना।
- कर्मणा मनसा वाचा अर्थात् कर्म से, मन से एवं वचन से ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अपनी

अपनी दिनचर्या को सम्पन्न करने के लिये प्रेरणा देना।

- नेतृत्व, भ्रातृभाव व एकता की भावना को विकसित करने के लिये विद्यालय में विभिन्न पाठ्येतर क्रियाओं का आयोजन कराना।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची –

1. मुण्डकोपनिषद् 1–2–8
2. ईशावास्योपनिषद्–1
3. ईशावास्योपनिषद्–1
4. छान्दोग्योपनिषद्–22–2
5. तैत्तिरीयोपनिषद्–1–1–1
6. ईशावास्योपनिषद्–3
7. ईशावास्योपनिषद् 2
8. तैत्तिरीयोपनिषद्–1–4–1
9. मुण्डकोपनिषद–3–1–6
10. छान्दोग्योपनिषद्–24–10
11. कठोपनिषद्–3/3–4
12. छान्दोग्योपनिषद्–24–2
13. तैत्तिरीयोपनिषद्–1–9–1
14. कठोपनिषद–3–14
15. ईशावास्योपनिषद– 6
16. केनोपनिषद्–2–7
17. ईशावास्योपनिषद–7
18. आचार्य सत्यप्रिय, एकादशोपनिषद्, संस्कार प्रकाशन, दिल्ली–6, 1997
19. ईशादि नौ उपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि. सं. 2068
20. कल्याण, उपनिषद्–अङ्क, गीताप्रेस गोरखपुर, वि. सं. 2069
21. तैत्तिरीयोपनिषद्, गीता प्रेस, गोरखपुर, वि. सं. 2066
22. भारतीय डॉ. भवानीलाल, उपनिषदों की कथाएँ, सुकीर्ति पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2004
23. द्विवेदी डॉ. सच्चिदानन्द, ईशादिपञ्चोपनिषदः, श्री शारदापीठ प्रकाशनम्, गुजरात, 2007
24. श्रीवास्तव डॉ. उर्मिला, साहित्य भण्डार, इलाहबाद, 2001
25. विद्या वाचस्पति नरेन्द्र, उपनिषदों की देन, विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द, दिल्ली–6, 1997